इकाई 10 उत्तर–औपनिवेशिक समाजों में विकास आर पर्यावरण संबंधी चिंताएं*

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 नए राष्ट्रों के वादे एवं उम्मीदें

10.3 विकास सिद्धांत

10.4 नागरिक आवाज़ों का उदयः सामाजिक आंदोलन और भागीदारी विकास

10.5 वैश्वीकरण, जलवायु परिवर्तन और विकास की पुनर्कल्पना

10.6 सारांश

10.7 शब्दावली

10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.9 संदर्भ ग्रंथ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के बाद आप निम्नलिखित के बारे में विस्तार से जानेंगेः

* प्रो. सुधा वासन, समाजशास्त्र विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय।

- विकास ने पर्यावरण को किस कदर प्रभावित किया है तथा उत्तर औपनिवेशिक देशों के समाज जिसे हम तीसरी दुनिया या विकासशील देश के नाम से जानते हैं, ने अंधाधुंध विकास के नाम पर पर्यावरण को कितना नुकसान पहुंचाया है;
- औपनिवेशिक नीतियों से पारिस्थितिक मुद्दों, विवादों, संरक्षण, बहाली आदि और इस बदलाव के परिणामों की दिशा में स्वतंत्र भारत में कानून का निर्माण;
- कैसे विकास से हरित क्रांति जैसे तकनीकी नवाचारआया जिससे कृषि में क्रांतिकारी सुधार आया तथा पर्यावरण भी प्रभावित हुआ;
- चिपको आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन आदि जैसे स्थानीय लोगों द्वारा किए गए आंदोलन की पृष्ठभूमि और प्रभाव; और
- पर्यावरण विरोधी दृष्टिकोण के खिलाफ केंद्र और राज्यों द्वारा बनाई गई नीतियाँ तथा अतिक्रमण के खिलाफ अभियान तथा "पर्यावरण की कीमत पर विकास समाज के हित में नहीं" पर विषद विश्लेषण।

10.1 प्रस्तावना

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि पारिस्थितिक चिंताएं विकास की जरूरतों के रूप में योग्य हैं। हम सभी बेहतर जीवन और भविष्य की खोज में विकास चाहते हैं। लेकिन, क्या खदान, बांध या सड़क बनाने के फैसले को उसकी पारिस्थितिकीय हानि से लड़े रहने की आवश्यकता नहीं है? पर्यावरण बनाम विकास का वाद–विवाद कोई नई या अनसुनी नहीं है ।

विकासात्मक लक्ष्यों और पारिस्थितिक खतरों और शिकायतों के बीच विरोधाभास दुनिया भर के देशों के लिए एक चुनौती है। उदाहरण के लिए, वन क्षेत्र में खनन, वनों की कटाई, और कोयला ब्लॉक उत्खनन से न केवल इसकी वनस्पतियाँ और जीवों प्रभावित होते हैं बल्कि वन–वासी भी इसके चपेट में आते है। वनवासियों का की आजीविका एवं उनका अस्तित्व वन और इसके संसाधनों पर निर्भर हैं। ऐसी स्थिति में क्या हम विकास के लक्ष्यों और रणनीतियों के नाम पर इसके संसाधन–आधार का दोहन जारी रखना क्या विकास का "नैतिक पहलूवा उत्तरदायित्व" है? क्या "सतत विकास" हमारा मिशन और आदर्श वाक्य नहीं होना चाहिए?

10.2 नए राष्ट्रों के वादे एवं उम्मीदें

विकास और पर्यावरण समाज को एक विशिष्ट ऐतिहासिक पहचान दिलाने के महत्वपूर्ण कारक हैं। 1940 के दशक में एक ऐसा दौर था जब बड़े पैमाने पर स्वतंत्रता आंदोलनों के बाद कई नए राष्ट्रों का जन्म हुआ था, जिन्होंने उन्हें औपनिवेशिक शासन से मुक्त कराया था। सफल औपनिवेशिक विरोधी संघर्ष ने स्वतंत्रता के साथ समानता और समृद्धि को जोड़कर आम जनों में विश्वास बहाल करने में सफलता पाई। स्वतंत्रता ने सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन की उम्मीदें बढ़ाईं और नए लोकतांत्रिक राष्ट्रों में विकास के प्रति जागरूकता बढ़ी। उत्तर औपनिवेशिक समाज के लिए यह विकास के एक युग की शुरुआत के रूप में चिह्नित है। पर्यावरण संबंधी चिंताएँ और विकास की जरूरतों को संतुलित करने में इन्हें विशेष चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

औपनिवेशिक शासन से मुक्ति के उत्तरात वहाँ के लोगों की आर्थिक समृद्धि एवं आधुनिकीकरण में वृद्धि हुई। औपनिवेशिक शासकों की नीतियों को लोकतांत्रिक देशों ने खारिज करते हुए नागरिकों के कल्याण से संबन्धित नीति निर्धारित किए। औपनिवेशिक हितों के लिए जिन प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया गया, उन्हें अब राष्ट्र की जनता के कल्याण और खुशहाली के लिए समर्पित किया गया। मतलब औपनिवेशिक राष्ट्र राज्यों के विकास के लिए सबसे बड़ी चुनाती थी।

राज्यों की भूमिका और उसकी विश्वसनीयता विकास के वादे को पूरा करने की उसकी क्षमता पर आधारित थी । आधुनिकीकरण उस समय प्रमुख विकास सिद्धांत था। मशहूर पर्यावरणविद रोस्टो ने अपने एकरेखीय आर्थिक विकास संबंधी परिकल्पना में निम्नलिखित चरणों का उल्लेख किया है:

1) पारंपरिक समाज

2) टेक ऑफ (विकास की छलांग) की पूर्व शर्तें

3) टेक ऑफ (विकास की छलांग)

4) परिपक्वता

5) उच्च खपत/उपभोग का काल

पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं, प्रौद्योगिकियों और संस्कृतियों को इन "पिछड़े" क्षेत्रों के विकास का का बाधक समझा गया। नए स्वतंत्र राष्ट्रों को चरण 1 और 2 में रखा गयाजो विकसित राष्ट्रों के साथ टेक ऑफ चरण में जाने और

अंततः विकसित राष्ट्रों तक पहुँचने को प्रतिबद्ध थे। विकसित दुनिया का मॉडल विकासशील देशों के लिए एक अनुकरणीय मॉडल था। औपनिवेशिक समाजों को तुलनात्मक रूप से 'अल्पविकसित' और बाद में 'विकासशील' समाजों के रूप में वर्गीकृत किया गया। विकास नीतियों और परियोजनाओं को सीधे विकसित क्षेत्रों से आयात किया गया जो औपनिवेशिक समाजों में आधुनिकीकरण लाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास था।

इस अवधि में विकास, राष्ट्रीय आर्थिक विकास का पर्याय था और इसे सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के संदर्भ में मापा जाता था। ग्रॉस डोमेस्टिक प्रोडक्ट (जीडीपी) किसी भी देश की आर्थिक सेहत को मापने का पैमाना या जरिया है। भारत में जीडीपी की गणना प्रत्येक तिमाही में की जाती है। जीडीपी का आंकड़ा अर्थव्यवस्था के प्रमुख उत्पादन क्षेत्रों में उत्पादन की वृद्धि दर पर आधारित होता है। जीडीपी के तहत कृषि, उद्योग व सेवा तीन प्रमुख घटक आते हैं। इन क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ने या घटने के औसत के आधार पर जीडीपी दर तय होती है। प्रत्येक देश अपने राज्यों के साथ ताल–मेल रखकर विकास और आधुनिकीकरण की दिशा में अग्रसर थे। इन्हें विकास एजेंट के रूप में भी जाना जाता है।

विकास की उपलब्धियां उनके औपनिवेशिक गरीबी से दूर होने का परिचायक था तथा यह उनके लिए राष्ट्रीय गौरवकी बात थी। इसके साथ ही, उन्होंने खुद को "पिछड़े" स्वदेशी संस्कृति से अलग करने के लिए भी प्रयास किया, जिसके कारण उनका समाज विकास नहीं कर पाया था तथा नए राष्ट्रों के एकीकरण में बाधा थी। इस प्रकार, विकास को उपनिवेशवाद और स्वदेशी

संस्कृति दोनों से एक दूरी बनाए रखने की उम्मीद थी। चंडीगढ़ और ब्रासीलिया जैसे नए राजधानी शहर इस आधुनिकता के प्रतीक के रूप में उभरे। ये शहर समृद्ध और समतावादी समाजके मॉडल क रूप में उभरे। बड़े दृबड़े बांधों का निर्माण तथा नए नए शहरों के उद्भव एवं विकास में नवोन्मेष विचारों और प्रौद्योगिकियों का महत्वपूर्ण योगदान था। विकसित राष्ट्रों से तकनीकी–सामाजिक पैकेज आयात किए गए थे ताकि स्थानीय परिस्थितियों में प्रत्यारोपित किया जा सके। युद्ध के बाद की अवधि में वैश्विक राजनीतिक अर्थव्यवस्था इसके लिए अनुकूल थी। विभाजन की सौगात के रूप में प्राप्त भारत की खंडित स्वतन्त्रता इसके विकास के मार्ग में बड़ी बाधा थी। नई विकास परियोजनाएं तथा ओद्योगीकरण के साथ ही मिश्रित अर्थव्यवस्था की संकल्पना ने राष्ट्र की प्रगति को दिशा प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने चंडीगढ़ के बारे में कहा है, "यह एक नया शहर, भारत की स्वतंत्रता का प्रतीकहै तथा, अतीत की निरंकुश परंपराओंऔर भविष्य में राष्ट्र के विश्वास की अभिव्यक्ति है"।

भूखमारी, गरीबी एवं खाद्यान्न संकट से निपटना राष्ट्रीय गौरव की बात थी। विकासशील राष्ट्रों के लिए बढ़ती जनसंख्या और गरीबी पर नियंत्रण रखना प्रमुख चुनौति थी। जबकि प्रमुख पश्चिमी विचारक अधिक जनसंख्या को गरीबी का कारण मानते थे। इसके विपरीत स्वतंत्र राष्ट्रों ने जनसंख्या बेतहासा वृद्धि को प्रमुख कारण माना। औपनिवेशिक लूट, जन कल्याण के प्रति उदासीनता और कुप्रबंधन को व्यापक भूख और खाद्यान्न संकट के कारणों के रूप में पहचाना गया तथा खाद्यान्न की आत्मनिर्भरता को राष्ट्रीय गौरव से

जोड़ा गया। इसलिए बढ़ती आबादी को खिलाने के लिए कृषि उत्पादकता में वृद्धि एक प्राथमिक उद्देश्य था।

कुछ विद्वान, विशेष रूप से संरचनात्मक और विकास के बाद के काल के विद्वान, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उत्पन्न शीत युद्ध की राजनीति को इस क्षेत्र में विकास का प्रमुख कारण मानते हैं। विकास नए सिरे से औपनिवेशिक समाजों के बाद बने शक्तिशाली राष्ट्रों के लिए वैश्विक प्रभाव के विस्तार के लिए एक साधन के रूप में उभरा । संयुक्त राज्य अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति ट्रूमेन ने संयुक्त राज्य अमेरिका की शीत युद्ध काल की विदेश नीति के रूप में प्रतिपादित किया। यह ट्रूमेन सिद्धांत क रूप में जाना जाता हैजो सोवियत भू राजनीतिक विस्तार को नियंत्रित करने के लिए विरोधी राष्ट्रों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के रूप में वर्णित है। अमेरिका ने सक्रिय रूप से उन देशों के विकास के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जो सोवियत संघ के प्रभाव क्षेत्र में थे । ट्मेन घोषणा ने औपनिवेशिक समाजों के निर्माण को "तीसरी दुनिया" के रूप में चिह्नित किया और अमेरिका को "पहली दुनिया" के रूप में सक्रिय रूप से विकास के पूंजीवादी मॉडल को बढ़ावा देने वाला राष्ट्र के रूप में प्रोत्साहित किया। विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जिन्हें कम्युनिस्ट प्रभाव के लिए अतिसंवेदनशील माना जाता था।

हरित क्रांति (जीआर) इस तरह के तकनीकी सामाजिक पैकेज का एक उदाहरण है जो अमेरिकी वित्तपोषण, प्रभाव और प्रौद्योगिकी के साथ आया और जिसने उत्तर औपनिवेशिक समाजों के कृषि प्रौद्योगिकीएवं इसके संबंधों का बदल दिया। हरित क्रान्ति पैकेज में अमेरिका के वित्तीय और तकनीकी सहायता

के साथ मेक्सिको में विकसित चावल और गेहूं की नई, उच्च उपज वाली किस्मों को शामिल किया गया। उपजाऊ व सिंचित भूमि पर गहन मोनोक्रॉपिंग, कृषि गतिविधियों का मशीनीकरण, बाजार, खाद्यान्न भंडारण और परिवहन नेटवर्कको शामिल कर हरित क्रान्ति को एक दिशा प्रदान की गई। इसतरह खाद्य उत्पादन बढ़ाने की समस्या का तत्काल समाधान प्राप्त हुआ तथा कृषि संबंधों को सबसे अधिक उत्पादक कृषि क्षेत्रों में वित्तीयकरण को भी सुनिश्चित किया। हरित क्रान्ति द्वारा कृषि के क्षेत्र में उन्नत तकनीकी और खुले बाजार की संकल्पना से उन्नत किसानों को अत्यधिक लाभ हुआ। कृषक, कृषि के लिए बीज, उर्वरक, कीटनाशक, अद्यतन जानकारियाँ और नई आयातित कृषि प्रणाली के ज्ञान और उपज की खरीद के लिए बाजार पर निर्भर थे। सामाजिक और पारिस्थितिक संबंधो पर हरित क्रान्ति का सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव आज भी चर्चा का महत्वपूर्ण विषय है।

इस अवधि में पर्यावरण को प्राकृतिक संसाधन का दर्जा दिया गया जो विकास के लिए एक आवश्यक कारक है। नवगठित राष्ट्रों ने पर्यावरण की सुरक्षा को राष्ट्रीय लक्ष्यका दर्जा दिया। भारत में प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण संविधान के नीति निर्देशक सिद्धांतों का एक तत्व हैः अनुच्छेद 48 में कहा गया है, राज्य पर्यावरण की रक्षा और सुधार और देश के वनों और वन्यजीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा; अनुच्छेद 51–ए में कहा गया है, वनों, झीलों, नदियों और वन्यजीवों सहित प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और सुधार करने के लिए भारत के प्रत्येक नागरिक की पहचान की जाएगी और जीवित प्राणियों के प्रति दया और सहिष्णुता रखी जाएगी। संविधान में पर्यावरण को राष्ट्रीय विरासत

का दर्जा दिया गया। औपनिवेशिककाल के वन संबंधी कुछ क़ानूनों को राज्यों एवं अन्य संस्थानों ने थोड़ा बहुत परिवर्तन के बाद जारी रखा। 1927 का भारतीय वन अधिनियम स्वतंत्र भारत में प्रथम वन कानून बना ।

करिश्माई वनस्पति एवं जीवों को राष्ट्रीय धरोहर के रूप मेन संरक्षित किया गया है। पश्चिमी देशों ने ओद्योगीकरण से होने वाले पर्यावरण के नुकसान संबंधी दलीलों को अस्वीकार किया है। तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी का कथन कि "गरीबी को सबसे बड़ा प्रदूषक है" ओपनिवेशिक समाज के ऊपर एक कटाक्ष है। पश्चिमी पर्यावरणवाद की इस अस्वीकृति से जीवों की प्रमुखप्रजातियो का स्थान (वन व पहाड़) नए राष्ट्रों के लिए गर्व का प्रतीक बने. औपनिवेशिक शासन के दौरान शासकों ने वन्य–जीव प्राणियों के लिए संरक्षित आवास और प्राकृतिक नजारे को राष्ट्रीय पार्कों में बदल दिया। इन क्षेत्रों के संरक्षित होने से स्थानीय नागरिकों को अपनी आजीविका चलाने के लिए वन संसाधन के उपयोग से वंचित होना पड़ा। इससे आक्रोशित जन समुदाय ने विभिन्न फोरम पर इसका प्रतिरोध किया। इन वनों का उपयोग करने वाली स्थानीय आबादी अक्सर वनों और अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण की औपनिवेशिक प्रथाओं को जारी रहने स त्रस्त थी। विकासशील देशों द्वारा जंगलों को अपने अधीन कर स्थानीय लोगों को इसकए उपभोग से वंचित करने तथा प्राकृतिक संसाधनों का सरकारी मशीनरी द्वारा दोहन के विरुद्ध कई सामाजिक संगठन उठ खड़े हुए। भारत का चिपको आंदोलन ऐसा ही एक शानदार संरक्षणवादी आंदोलन थी जिसकी चर्चा आगे के खंडों में की जाएगी।

10.3 विकास सिद्धांत

इस अवधि में लैटिन अमेरिकी देशों के उग्र विकास सिद्धांतों ने विकास की सामान्य समझ को बदल दिया। निर्भरता सिद्धांत ने आधुनिकीकरण सिद्धांत के मूल आधार को अस्वीकार कर दिया तथा विकास को राष्ट्रों की राष्ट्रों की उनकी हदों के आधार पर विश्लेषण किया गया। इसने इस विचार को भी अस्वीकार कर दिया कि सभी राष्ट्र एक समान राष्ट्र के विकास मार्ग पर अग्रसर हैं तथा विकासशील देश अपने को विकसित देशों के स्टार तक पहुँचने के लिए प्रयासरत हैं। इसके बजाय उन्होंने अंतरराष्ट्रीय श्रम विभाजन का उल्लेख करते हुए तर्क दिया कि उपनिवेशवाद ने उपनिवेशों की अर्थव्यवस्था में मौलिक और परस्पर संबंधित संरचनात्मक विकृतियों का निर्माण किया है। औद्योगीकृत देशों ने अपने औपनिवेशिक और शाही संबंधों के बल पर शेष विश्व (समाजवादी देशों के अलावा) में उपलब्ध संसाधनों का दोहन किया। आज भी विश्व अर्थव्यवस्था को बनाए रखने वाले देशों द्वारा अल्पविकसित राष्ट्रों के संसाधनों का शोषण एवं बाजार पर नियंत्रण बदस्तूर जारी है। विश्व प्रणाली सिद्धांत एक और सिद्धांत है जो शक्तिशाली राज्यों के बीच के अपने संबंधों के बल पर पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करा रहा है। विश्व के देशों को विभिन्न श्रेणियों में रखकर उनके विकास के फौर्मूले बनाए गए। विकसित देशों की सानिध्य में रहने वाले विकासशील देशों का अधिक विकास हुआ बनिस्पत उनके जो उनकी छत्रछाया से दूर थे। अन्य देशों के अल्पविकास के कारणों की ऐसी पारंपरिक सोच पर अब सवाल उठने लगे हैं। विश्व के राष्ट्रों में विकास की असमानता को देखते हुए विकास के संकेतक जीडीपी एवं जीएनपी की संकल्पना अपर्याप्त और भ्रामक लगता है। इससे इतर वैकल्पिक संकेतक

और विचारधाराएँ उभरीं जो लोगों के बेहतर जीवन प्रणाली एवं इसकी गुणवत्ता में सुधार से संबन्धित था। इस संदर्भ में नोबेल पुरस्कार विजेता भारतीय अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन का "क्षमता दृष्टिकोण" का उल्लेख समीचीन है। उनका दावा है कि स्वतंत्रता, विकास का प्राथमिक और प्रमुख साधन है। स्वतन्त्रता से जहां लोगों की विकास संबंधी क्षमताओं में वृद्धि होती है, वहीं उनके बेहतर जीवन के लिए संसाधन में उपलब्ध कराए जाते हैं। विकास से जुड़ी स्वतंत्रता में राजनीतिक स्वतंत्रताएं, आर्थिक सुविधाएं, सामाजिक अवसर, पारदर्शिता गारंटी और सुरक्षात्मक सुरक्षा शामिल है। आजकल संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा सालाना मानव विकास रिपोर्ट (एचडीआर) प्रकाशित किया जाता है जो मानव विकास के सूचकांक के आधार पर राष्ट्रों को रैंकिंग प्रदान करता है। बाद में विकास से संबन्धित अन्य संकेतक मसलन मानव कल्याण सूचकांक, पारिस्थितिक स्थानों की पहचान, भूटान सकल राष्ट्रीय खुशहाली सूचकांक, हैप्पी प्लैनेट इंडेक्स, सस्टेनेबिलिटी इंडेक्स, संयुक्त राष्ट्र सतत विकास लक्ष्य, वैश्विक शांति सूचकांक आदि विकसित हुए जो विकास को समझने के अर्थशास्त्र के सिद्धांत से परे थे।

10.4 नागरिक आवाज़ों का उदयः सामाजिक आंदोलन और भागीदारी विकास

दो दशकों में राज्य के नेतृत्व वाले विकास के पैतृक मॉडल, जो आर्थिक विकास के एक विशेष मॉडल का समर्थन करता था, के विरोध में आवाज़ें उठने लगीं। पिछले दो दशकों के विकास के मॉडल के सामाजिक और पारिस्थितिक प्रभावों पर भी सवाल उठाए गए। इनमें से सबसे प्रसिद्ध भारत के वर्तमान

उत्तराखंड राज्य में चिपको आंदोलन है जहां स्थानीय लोगों ने स्थानीय हिमालयी वनों के वाणिज्यिक दोहन पर आपत्ति जताई थी जिसे वे अपनी आजीविका के लिए इस्तेमाल करते थे। यह आंदोलन अपने विरोध के प्रकार (स्टाइल) के कारण ज्यादा प्रसिद्ध हुआ। ग्रामीण महिलाओं ने राज्य वन विभाग द्वारा समर्थित निजी ठेकेदारों को पेड़ों को काटने से रोकने के लिए अपने स्थानीय जंगलों में पेड़ों से लिपटकर उन्हें गले लगाया। श्री सुंदरलाल बहुगुणा के नेतृत्व में जंगल के पेड़ों से चिपककर इसको काटने से रोकने का यह एक अनूठा विरोध था जिसे विश्व के लोगों ने चिपको आंदोलन के रूप में जाना। विद्वानों ने इस क्षेत्र में किसान संघर्षों के लंबे इतिहास में ग्रामीण महिलाओं द्वारा की गई इस कार्रवाई को संदर्भित किया है और प्राकृतिक आजीविका संसाधनों पर स्थानीय नियंत्रण का दावा किया है। स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों पर स्थानीय नियंत्रण के लिए आंदोलन की मांग व्यवहार में दूर–दूर तक गूंज रही थी। यहां तक कि इस आंदोलन पर वैश्विक विचारक व विद्वानों का भी ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। प्राकृतिक आजीविका संसाधनों पर विकेंद्रीकृत नियंत्रण की मांगतथा वन संसाधन के दोहन के खिलाफ होने वाले विरोध आंदोलन को चिपको आंदोलन से बड़ी प्रेरणा मिली। इस संदर्भ में ब्राजील में रबड़ के पेड़ों से दूध निकालने वाले कट्टरपंथी ट्रेड यूनियन नेता चिको मेंडेस ने अपने आंदोलन के बारे में लिखा है "पहले मैंने सोचा कि मैं रबड़ के पेड़ों को बचाने के लिए लड़ रहा हूं, फिर मैंने सोचा कि मैं एमेज़ोन वर्षावन को बचाने के लिए लड़ रहा हूं किन्तु अब मुझे पता चल गया है कि मैं मानवता के लिए लड़ रहा हूं"। बाद में अज्ञात लोगों ने इनकी हत्या कर दी।

जबकि पिछले दशकों की पर्यावरण संबंधी चिंताएँ राज्यों की विषय थीं और ये पश्चिमी औद्योगिक देशों से प्रेरित थीं। इन सामाजिक आंदोलनों ने आजीविका के लिए संघर्ष कर रहे हाशिए पर गए लोगों के लिए न्याय दिलाने और पर्यावरण की रक्षा संबंधी अभियान को दिशा देने में प्रमुख भीमिका निभाई। जबकि राष्ट्रीय पार्क' कानून प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग की मनाही करता है ऐसे में पर्यावरण के संरक्षण हेतु शुरू किया गया चिपको आंदोलन एक महत्वपूर्ण कारक सीध हुआ। इस तरह के आंदोलनों ने स्थानीय वन संसाधनों को संरक्षित रखने तथा इसके सीमित उपयोग की सोच को जन्म दिया तथा विकास एवं पर्यावरण में ताल–मेल बिताने का प्रयास किया।

कुछ आंदोलन स्थानीय नियंत्रण स्थापित करने में सफल रहे जबकि अन्य शक्तिशाली राज्य और अंतरराष्ट्रीय दबावों के खिलाफ वर्षों तक संघर्ष करते रहे। उदाहरण के लिए, भारत में नर्मदा बचाओ आंदोलन (एनबीए) ने बड़े पैमाने पर नदियों का अतिक्रमण तथा वन संपदा के दोहन के खिलाफ जारी संघर्ष में आदिवासी समुदायों, किसानों, पर्यावरणविदों और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं को एक मंच पर लाया। इससे पारिस्थितिक तंत्र, वन्य संस्कृति और स्थानीय लोगों की आजीविका संबंधी समस्याओं को सुलझान में मदद मिली। बड़ी–बड़ी विकास परियोजनाओं का विनाशकारी आयात, इसकी लागत का अनुचित वितरण और विकास के फिसड्डी मॉडल की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित करने में यह आंदालन सफल रहा। इनमें स्पष्ट रूप से राजहठ, अन्याय और पारिस्थितिक और सामाजिक अस्थायित्व से हटकर अन्य कई विकल्प सुझाए गए।

1984 में मध्य प्रदेश के भोपाल स्थित यूनियन कार्बाइड इंडिया लिमिटेड (यूसीआईएल) कीटनाशक संयंत्र से जहरीली गैस का रिसाव सदी की एक भयानक त्रासदी थी जिसमें पाँच लाख से अधिक लोगों की जानें गईं। यह दुनिया की सबसे वीभत्स औद्योगिक आपदाओं में से एक है। शहर के बीचोबीच घनी आबादी में स्थित इस कारखाने से तड़के सुबह मिथाइल आइसोसायनेट (एमआईसी) नामक गैस रिसाव के संपर्क में आए लोग मौत, विकलांगता और अंतर पीढ़ी गत स्वास्थ्य प्रभावों से ग्रसित हुए। इस विनाशकारी दुर्घटना के कारणों की जांच में कंपनी की लापरवाही,कम निवेश, अपर्याप्त सुरक्षा उपकरण, खराब नियमन और सुरक्षा ऑडिट की चेतावनियों की अनदेखी आदि पाई गई। यूसीआईएल, संयुक्त राज्य अमेरिका और भारतीय सरकारों, स्थानीय भोपाल प्राधिकरणों द्वारा पीड़ितों को उचित मुआवजा हेतु कानूनी कार्यवाही की गई। इस दुर्घटना ने स्पष्ट कर दिया कि इन उद्योगों का प्रमुख उद्देश्य लाभ कमाना ही है, श्रमिकों एवं कामगारों की सुरक्षा इनकी प्राथमिकताओं में नहीं थी। इस त्रासदी के उचित मुआवजेकी मांग और कानूनी तकरार बहुत लंबी चली। भोपाल गैस त्रासदी विकास और पर्यावरण के बीच के अभिन्न संबंध की ओर ध्यान आकर्षित करती है। यह घटना आगाह करती है कि विकास के साथ मानव जीवन और इसके मूल्यों की रक्षा करना जरूरी है। शुरू में विकास की सामाजिक और पर्यावरणीय लागतों के लिए उचित लेखांकन की मांग करने वाले आंदोलनों को विकास विरोधी आंदोलन कहकर आलोचना की गई थी किन्तु बाद में इसे गरीबों के विकास और पर्यावरणवाद की अवधारणा के रूप में मान्यता दी गई।. पहले औद्योगिक विकास को पर्यावरण के लिए खतरा माना जाता था किन्तु विकास के सिद्धांत ने पर्यावरण

संबंधी मानकों को कठोरता से पालन कर इस दिशा में एक सार्थक पहल की। वैश्विक संसाधनों का उपभोग करने वाले उच्च उपभोगात्मक समाजों के विपरीत, यह माना जाता था कि जंगल में निवास करने वाले लोगों ने स्थानीय संसाधनों का अपनी आजीविका के लिए भरपूर उपयोग किया। राष्ट्रीय स्तर पर उत्तर –औपनिवेशिक राज्यों में पर्यावरण संरक्षण के विकास का विरोध करने वाले विरोधाभास मॉडल से प्रभावित रहे। हालांकि, विकास–पर्यावरण गठजोड़ का एक वैकल्पिक परिप्रेक्ष्य सभ्य नागरिक समाज में विकसित हो रहा था।

वैश्विक स्तर पर, संयुक्त राष्ट्र ने 1983 में पर्यावरणीय क्षति के बिना आर्थिक विकास की क्षमताओं की जांच करने के लिए अपब्रूंडटलैंड आयोग का गठन किया। "हमारा साझा भविष्य" – नाम से प्रकाशित अपनी रिपोर्ट में आयोग ने "सतत विकास" को विकास के रूप में परिभाषित किया है जो आने वाली पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों को पूरा करने के लिए आगाह करता है। इस अवधारणा को आमजनों की स्वीकृति नहीं मिली। हालांकि, इसने पर्यावरणीय चिंताओं और अंतरपीढ़ीगत इक्विटी को भी मुख्यधारा में रखा जो उन्हें विकास से जोड़ता है। इस दिशा में किए गए कुछ पहल विकास परियोजनाओं के डिजाइन और इसके कार्यान्वयन से लोगों को होने वाले फ़ायदों को उद्धृत किया जबकि अन्य ने सामाजिक आंदोलन के नजरिए से इसकी व्याख्या की। इस दिशा में लोगों के साथ परस्पर बातचीत कर उनके हितों को ध्यान रखते हुए लोगों में जागरूकता बढ़ाने की दिशा में पहल की गई।

उत्तर औपनिवेशिक क्षेत्रों में स्थित समृद्ध प्राकृतिक संसाधनों से युक्त ग्रामीण क्षेत्रों मेंसमुदाय आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन (CBNRM) एक मॉडल के रूप में उभरा। . इसने सुसंयोजित और भागीदारी विकास अवधारणाओं को आकर्षित किया तथा विकास और संरक्षण के बीच संबंध को रेखांकित किया। इस सार्वजनिक संपत्ति संसाधन आंदोलन को प्रभावित करने वाले एक अन्य विचारधारा ने इस तथ्य पर प्रकाश डाला कि गरीब देशों में विशाल संसाधन खास आदमी के हाथों में है तथा यह आम आदमी के उपयोग के लिए प्रतिबंधित है।वन संपदा औपनिवेशिक राज्यों के लिए के लिए राजस्व का एक प्रमुख स्रोत थी जिसे राज्यों ने नौकरशाही जैसे संस्थागत ढांचे के माध्यम से विनियोजित और नियंत्रित कर रखा था। स्थानीय वन संपदा के उपयोगकर्ता, विशेष रूप से वे समुदाय जो सामूहिक रूप से इन वनों का उपयोग करते थे, आधुनिक कानूनी प्रणालियों द्वारा बेदखल किए गए थे। इन्हें गैर–यूरोपीय अधिकारों के स्वरूपों की जानकारी नहीं थी।. जैसे–जैसे पर्यावरण संबंधी जागरूकता में वृद्धि हुई , संरक्षण के उद्देश्योंको पूरा करने में मदद मिली। औपनिवेशिक देशों में वाणिज्यिक वानिकी और संरक्षण दोनों ने स्थानीय लोगों को अपने पारंपरिक वनों से बाहर रखा। औपनिवेशिक समाजा को यह न केवल विरासत में मिली बल्कि स्वदेशी औपनिवेशिक अभिजात वर्ग ने भी इन संस्थाओं और प्रथाओं को जारी रखा और आगे बढ़ाया। अब औपनिवेशिक राष्ट्र के नाम पर। औपनिवेशिक समाजों में वन विभाग दमनकारी के रूप में उभरा जिसने प्राकृतिक संसाधनों का आजीविका के रूप में उपयोग करने वाली स्थानीय समुदाय को नियंत्रित किया। समुदाय आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन ने

एक क्रांतिकारी परिवर्तन का प्रस्ताव किया है जिसका औपनिवेशिक दुनिया में मिला–जुला प्रभाव दिखा।

भारत में संयुक्त वन प्रबंधन गैर–सरकारी भागीदारों, विशेष रूप से प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन में उपयोगकर्ता समुदायों को पहचानने और शामिल करना प्रणालीगत बदलाव का एक उदाहरण है। यह भारत के 27 राज्यों की नीति बनी। कुछ मामलों मेंइसके परिणामस्वरूप आजीविका, संरक्षण और राज्य–समाज के संबंधों में काफी सकारात्मक परिवर्तन हुआ। हालांकि, संपत्ति के अधिकारों और शक्ति पदानुक्रम में बमुश्किल कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए, इसके प्रभाव को सीमित किया गया।भागीदारी विकास का यह मॉडल 1990 के दशक तक विकास योजनाओं के कार्यान्वयन में सर्वव्यापी था। स्थानीय समुदायों के लोग कई समूहों मेंसंगठित हुए। कभी–कभी विकास और संरक्षण योजनाओं की एक विस्तृत विविधता के लिए पारंपरिक ग्राम समुदाय संगठनों के साथ ये समूह एक जैसे (ओवरलैप) दिखते थे। भारत में यह निर्वाचित ग्राम सभा की तरह था जो विकेंद्रित शासन विधि, पंचायतीराज के अंतर्गत प्राधिकृत है। पंचायती राज जिसका उद्देश्य लोकतान्त्रिक राजनीति ,विकास एवं संरक्षण प्रदान करना था।

1980 के दशक में अधिकांश उत्तर औपनिवेशिक समाजों में कल्याणकारी अवधारणाओं का नवउदारवाद के रूप में उतरोत्तर बदलाव दिखा। गैर–सरकारी संगठनों (गैर–सरकारी संगठना) के उद्भव से कम से कम आंशिक रूप से राज्यों और समाजों के बीच के तालमेल को बढ़ाया गया। इस काल में स्वैच्छिक और परोपकारी व्यक्तियों का समूह व संगठन मौजूद थे। 80 के

दशक उनके व्यावसायिकता और प्रसार के रूप में चिह्नित है। गैर सरकारी संगठनों के आकार, सरचना, पैमाने, दर्शन और प्रतिबद्धता में व्यापक रूप से विविधता थी। ये संस्थाएं राज्य की विकास संबंधी नीति को आम जन तक पहुंचाने वका काम करतीं हैं। वे अक्सर राज्य और गरीब समुदायों के बीच मध्यस्थ के रूप में अपनी सेवा प्रदान कराते हैं। इस काल में माइक्रोफाइनेंस, उद्यमिता विकास और स्वयं सहायता समूहों जैसे बाजार केंद्रित संस्थागत संरचनाएं फली–फूलीं। 2006 में सामाजिक उद्यमी मुहम्मद यूनुस को बांग्लादेश में ग्रामीण बैंक की स्थापना और ग्रामीण बांग्लादेशी महिलाओं के लिए अग्रणी माइक्रोक्रेडिट और माइक्रोफाइनेंस के लिए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया

औपनिवेशिक समाजों के भीतर ये संस्थागत बदलाव विकास और संरक्षण की वैश्विक राजनीतिक अर्थव्यवस्था में बदलाव का द्योतक है। हालांकि शीत युद्ध की अवधि में प्रथम राष्ट्र–राज्य द्विपक्षीय समझौतों पर चर्चा की गई थी, इसके बाद विश्व बैंक जैसे अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों ने विकास प्रवाह को आगे बढ़ाया। 1980 के दशक के अंत में अंतरराष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय गैर सरकारी संगठनों ने उत्तर औपनिवेशिक समाजों में विकास और संरक्षण को एक दिशा देने में प्रभावशाली भूमिका निभाई। इसने ग्रामीण और देश क सुदूर इलाकों में स्थित पूंजी और बाजार को लाने का मार्ग प्रशस्त किया। विकास के सिद्धांतकारों एवं पुरोधाओं ने विकास सिद्धांत में माइकल फ़ाउकल्ट के संवाद मीमांसा का अनुकरण करते हुए विकास उपक्रमों की तीखी आलोचना की।

उन्होंने तर्क दिया कि अंतरराष्ट्रीय विकास, सांस्कृतिक साम्राज्यवाद का एक रूप था जिसे विकास तंत्र के माध्यम सेआगे बढ़ाया गया था।

स्वदेशी लोगों पर विकास का विशेष नकारात्मक प्रभाव भी अब दिखने लगा था। इसका व्यापक प्रभाव लोगों के विस्थापन के रूप में दिखा। भारत जैसे देशों में विकास परियोजनाओं स विस्थापित ग्रामीण/आदिवासी/जनजातीय लोगों की संख्या जनसंख्या में उनके अनुपात की तुलना में असंगत रूप से बड़ी है। हालांकि, विकास की अक्षमता के अलावा प्राकृतिक संसाधनों के लिए अपने अधिकारों का लेखा–जोखा रखने के लिए उनकी सांस्कृतिक प्रणालियों के साथ विकास को असंगति भी अब व्यापक रूप से दिखने लगी है। सन 2000 ईस्वी में स्थापित स्वदेशी मुद्दों पर आधारित संयुक्त राष्ट्र के स्थायी मंच ने विकास प्रक्रिया में सांस्कृतिक विविधता को पहचानने की आवश्यकता पर बल दिया। सन 2003 में इसने सभी विकास परियोजनाओं में सांस्कृतिक, पर्यावरणीय और सामाजिक प्रभाव मूल्यांकन अध्ययन को अनिवार्य बनाने के लिए एक कानूनी ढांचे की भी मांग की।

10.5 वैश्वीकरण, जलवायु परिवर्तन और विकास की पुनर्कल्पना

संयुक्त राष्ट्र संघ के शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में विश्व के 191 सदस्य देशों ने सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में अपनी निम्नलिखित प्रतिबद्धताओं को एजेंडा में शामिल किया :

(क) अत्यधिक गरीबी और भुखमरी का उन्मूलन,

(ख) सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा,

(ग) लैंगिक समानता और महिलाओं के सशक्तिकरण को बढ़ावा देना,

(घ) बाल मृत्यु दर को कम करना,

(ई) मातृ स्वास्थ्य में सुधार,

(च) एचआईवी/एड्स, मलेरिया और अन्य बीमारियों से निजात पाना

(ओ) पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करना और विकास के लिए वैश्विक साझेदारी विकसित करना ।

सितंबर 2015 में भारत सहित 193 देशों ने "ट्रान्स्फ़ौर्मिंग ओवर वर्ल्ड द – 2030 एजेंडा फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट" का संकल्प लिया जिसे सतत विकास लक्ष्यों के नाम से भी जाना जाता है। इसके तहत 17 लक्ष्य तथा 169 उपलक्ष्य निर्धारित किए गए थे। यह विकास दुनिया भर के पर्यावरणीय परिवर्तनों के बीच संबंधों के बारे में बढ़ते ज्ञान और समझ को दर्शाता है। लंबे समय के लिए ऊर्जा की खपत बनाए रखने संबंधी संसाधन के उपलब्धता ,विकास का एक संकेतक माना गया। जीवाश्म ईंधन की खपत से पर्यावरण का तापमान बढ़ता है तथा भूजल का स्तर कम होता है। इसके परिणामस्वरूप पर्यावरण पर ग्रीन हाउस गैस का प्रभाव परिलक्षित हुआ। मानव की गलत गतिविधियों के कारण 19वीं सदी के मध्य में पृथ्वी के वायुमंडल में ग्रीन हाउस गैसों के बढ़ते स्तर से पृथ्वी के औसत तापमान में वृद्धि हुई जिसे भूमंडलीय ऊष्मीकरण (ग्लोबल वार्मिंग) कहा जाता है। इसप्रकार के वैश्विक मौसमके पैटर्न में परिवर्तन से आज जलवायु मे अप्रत्याशित परिवर्तन देखने को मिल रहा है। पूरी मानवता के लिए यह पर्यावरणीय चिंताका सबब है। पृथ्वी जलवायु परिवर्तन के विभिन्न चरणों से गुजरा है जिसका प्रभाव मनुष्यों और जलवायु प्रणाली पर असाधारण

रूप से पड़ा है। इस बात के काफी सबूत हैं कि मनुष्यों ने अपने गलत जीवन प्रणाली से वायुमंडलीय, जैवमंडलिक, भूवैज्ञानिक, हाइड्रोलॉजिकल प्रक्रियाओं जैसी पृथ्वी प्रणाली प्रक्रियाओं को प्रभावित किया है। यह प्रभाव इतना गहरा है कि भूवैज्ञानिकों ने प्रस्ताव किया है कि इस मानव प्रभावित भूवैज्ञानिक काल को एथ्रोपोसिन कहा जाए।

इन घटनाक्रमों का उत्तर औपनिवेशिक समाजों पर विशेष प्रभाव पड़ा और इसकी वजह से औद्योगीकरण तथा आर्थिक विकास की गति में कमी हुई। इस वैश्विक समस्या से लड़ने के लिए विसवा स्तर पर समन्वित प्रयास करने की आवश्यकता है। यद्यपि प्रारंभिक औद्योगीकरणका औपनिवेशिक राष्ट्रों पर प्रभाव को नियंत्रण करने संबंधी योगदान को नकारा नहीं जा सकता तथापि ये वही राष्ट्र हैं जो अपने विकास मे पर्यावरण की चिंता से कभी कभी बेखबर रहे। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव असमान रूप से दुनिया के गरीब देशों में अधिक पाया गया। इससे मानवीय जीवन प्रभावित हुआ है तथा समाज के कमजोर वर्ग के लोगों में असुरक्षा का भाव विकसित हुआ है।

औपनिवेशिक समाज वैश्विक पर्यावरणीय चिंताओं से निपटने के लिए कई अंतरराष्ट्रीय प्रयासों का अभिन्न अंग रहे हैं और इन पहलों में भी अग्रणी भूमिका निभा चके हैं। उदाहरण के लिए, भारत 1987 में ओजोन परत (ओजोन परत की सुरक्षा के लिए वियना कन्वेंशन), जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी) और कन्वेंशन ऑन बायोलॉजिकल विविधता और1992 मेंसंयुक्त राष्ट्र संघ का अर्थ शिखर सम्मेलन का एजेंडा 21 जिसमें ओजोन परत को कम करने वाले पदार्थों पर मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉलका निर्धारण

आदि। इन प्रतिबद्धताओं पर हस्ताक्षर करने के अलावा भारत ने इस तरह के सम्मेलनों में विकासशील देशों की ओर से चिंताओं को व्यक्त करने और बातचीत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को रोकने के लिए के वैश्विक जिम्मेदारी तय करने और इसको लागू करने हेतु प्रोत्साहित करने के क्षेत्र में भी भारत की भूमिका उल्लेखनीय रही। विकसित देशों ने प्रारंभिक औद्योगीकरण के अपने चरण के दौरान विकसित देशों के भारी उत्सर्जन के इतिहास और वर्तमान में उच्च प्रति व्यक्ति संसाधन खपत को कम कर के दर्शाया । . भारत ने अन्य घनी आबादी वाले, औपनिवेशिक राष्ट्रों के साथ मिलकर उनके अनुचित कृत्य की ओर ध्यान आकर्षित किया तथा समग्र संख्या के बजाय पूर्व निर्धारित प्रति व्यक्ति खपत की गणना को मान्यता देने की मांग की।

कई औपनिवेशिक समाज भी जलवायु परिवर्तन मसलन बारंबार मौसम की प्रकृति में चरमता ,से अपने को असुरक्षित महसूस कर रहे है। कई देशों में अत्यधिक वर्षा और कभी कभी अत्यधिक सूखा की स्थिति देखने को मिलती है। वैश्विक तापमान बढाने से ग्लेशियर का पिघलना तथा मौसम की चरमता से बचाने के लिए लोगों का अन्य जगहों की ओर पलायन की घटनाओं में वृद्धि देखा गया है। संयुक्त राष्ट्र महासंघ की लाचार प्रबंधन एवं कमजोर नीति की वजह से भी उक्त घटनाएँ हुईं जिसके परिणामस्वरूप जीवन और संसाधनों की हानि हुई है। जलवायु परिवर्तन के अलावा जैव विविधता, वनों की कटाई औरकृषि योग्य भूमि में तेजी से होने वाली कमी, महासागरों का अम्लीकरण, मीठे पेय जल का नुकसान, वातावरण में धुंध आदि (एयरोसोल) में वृद्धि,

नाइट्रोजन और फॉस्फोरस चक्रों में व्यवधान और परिवर्तन, रासायनिक प्रदूषण और ओजोन क्षरण ऐसी चिंताएं हैं जो सभी राष्ट्रों को प्रभावित करती हैं। हालांकि ये वैश्विक चिंताएं हैं जो पृथ्वी की प्रणाली को प्रभावित करती हैं। विश्व के राष्ट्र इन समस्याओं से निपटने के लिए प्रयासरत है।

उत्तर–औपनिवेशिक काल म कृषि के व्यवसायीकरण के परिणामस्वरूप गंभीर कृषि संकट पैदा हुआ। पारिस्थितिक क्षरणमें बढ़ोत्तरी तथा राजनीतिक और सामाजिक चुनौतियों में बढ़ोत्तरी हुई। व्यावसायिक स्तर पर अधिक लाभ देने वाले फसलों को उपजाने की ओर रूझान, वैश्विक बाजार की मांगों में उतार–चढ़ाव,खेती के लिए मशीनका उपयोग, फसलों के गहन सिंचन, उर्वरक और कीटनाशक का अत्यधिक उपयोग एवं मोनोकल्चर कृषि की शुरुआत आदि का पर्यावरण पर बुरा प्रभाव पड़ा। संसाधनों का गहन दोहन, ऊर्जा का अत्यधिक खपत तथा भूजल का दोहन आदि का विकासशील समाजो में विनाशकारी प्रभाव पड़ा है । अल्पावधि में बड़े किसानों द्वारा त्वरित लाभ पैदा करने के परिणामस्वरूप भूजल स्तर में कमी , मिट्टी में लवण की मात्रा में बढ़ोत्तरी, मिट्टी की उर्वरता की हानि और कृषि की आर्थिक और पारिस्थितिक स्थिरता दोनों प्रभावित हुई। इससे कुछ क्षेत्रों में आक्रामक किसानीकरण की प्रक्रियामें तेजी देखी गई। विकासशील देशों में जैव ईंधन फसल(बायो फ्यूएल क्रॉप) का आक्रामक विस्तार, विकसित देशों में जीवाश्म ईंधन का उपयोग आदि एक स्थायी समाधान केरूप में उभरा। छोटे किसानों के जमीन का छोटे–छोटे टूकड़ों में बंटना तथा खेती पर अत्यधिक निर्भरता आदि से किसानों की गरीबी का प्रमुख कारण थे। भारत में हरित क्रांति से कृषि क्षेत्रों में मिश्रित प्रभाव

देखने को मिले। कृषि के पैटर्न में बदलाव एवं स्थानीय ऋण दाता महाजन के गिरफ्त में आकर किसान को काफी नुकसान हुआ। फसल नष्ट होने, इसे उचित बाजार भाव नहीं मिलने तथा देनदारों को पैसों का समय से भुगतान न कर पाने के परिणामस्वरूप किसान आत्महत्या करने को मजबूर हुए।

शहरीकरण, पूंजीवादी विकास का एक और विशिष्ट पैटर्न है। शहरी प्रदूषण का वहाँ के निवासियों के स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभावपड़ा तथा यह एक प्रमुख पर्यावरणीय चिंता के रूप में उभरा है। भारतीय और चीनी शहर विश्व के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में गिने जाते हैं। वहाँ के वायुमंडल में व्याप्त प्रदूषित हवा के कारण वहाँ के नागरिकों में विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी तकलीफ़ें बढ़ीं तथा नई–नई बीमारियाँ भी आईं।अरक्षणीय योजना और बुनियादी ढांचे के विकास, शहरी आबादी के वर्गों की उच्च उपभोगात्मक क्षमता, बड़े पैमाने पर बढ़ते निजी परिवहन, हवा और मौसम के पैटर्नसे इन शहरों में एक घातक कॉकटेल बनाजिससे सभी शहरी निवासियों के स्वास्थ्य और जीवन पर गंभीर प्रभाव पड़ा। स्वच्छ जल और नालों की बेहतर सफाई तथा स्वच्छता शहरों की अन्य प्रमुख समस्याएँ हैं। इस वजह से वहाँ का पर्यावरण भी प्रदूषित हुई।

भारतीय शहरों में वायु प्रदूषण व्यापकरूप से व्याप्त है जिससे शहरी स्वास्थ्य, पर्यावरण तथा आर्थिक स्थिति पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। भारत की राजधानी दिल्ली के वायुमंडल में 25 पीएम (व्यास में 2.5 माइक्रोमीटर से कम कणों से कम) की उच्च सांद्रता वाली जहरीली हवा व्याप्त है जिसे विश्व की सबसे जहरीली हवा माना जाता है। यह हवा फेफड़ों की गहराई से प्रवेश कर स्वसन संबंधी बीमारियों को बढ़ाता है। इसके कारण बच्चों में श्वसन संबंधी गंभीर

बीमारियाँ फैलीं तथा लोगों के स्वास्थ्य पर विनाशकारी इसका विनाशकारी प्रभावदिखने को मिला। प्रदूषित पर्यावरण की वजह से लोगों की गुणवत्तापूर्ण जीवन शैली में ह्रास, स्वास्थ्य संबंधी खर्चों में वृद्धि आदि परिलक्षित हुए। निजी वाहनों में जीवाश्म ईंधन जलने की लगातार बढ़ती संख्या ने औद्योगिक प्रदूषण के बढ़ाने में प्रमुख योगदानदी है। मौसमी धूल, तूफान, जंगल की आग और खुली फसल के आसपास के क्षेत्र में खूंटी के जलने से दिल्ली के वायुमंडल में जहरीली हवा के प्रतिशत में बढ़ोत्तरी हुई है। इस खतरे को रोकने के लिए दशकों से कई प्रयास किए गए हैं, जिनमें शहर के भीतर स्थित खतरनाक उद्योगों को बंद करना और स्थानांतरित करना, सार्वजनिक परिवहन प्रणाली और टैक्सी सेवाओं को डीजल से सीएनजी ईंधन में ले जाना, मेट्रो ट्रेन के बुनियादी ढांचे का विस्तार करना, डीजल जनरेटर के उपयोग को प्रतिबंधित करना आदि शामिल है। कचरा और सूखी पत्तियों के जलाने पर प्रतिबंध लगाने, शहर से सटे क्षेत्रों में फसल के बाद खूंटी जलाने पर प्रतिबंध लगाने, तथा एक विशेष पंजीकरण वाली गाड़ियों को विशेष दिन सड़क पर चलाने की अनुमति देना आदि कुछ निर्णय इस पर्यावरण संबंधी समस्या से निजात पाने की दिशा में सरकार की प्रमुख पहल है। इस समस्या ने सभी स्तरके लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है। पर्यावरण प्रदूषण का सामना करने संबंधी सरकार की अव्यवहारिक नीति की वजह से शहर के बुद्धिजीवी व संभ्रांत लोग भी प्रभावित हुए हैं तथा विश्व के विकसित देशों ने अंतरीक्ष के उपग्रहों से दिल्ली के ऊपर व्याप्त धुंध की तस्वीरें भी साझा कीं जिससे यहाँ के स्मॉग की भयावह स्थिति का उजागर हुआ। बढ़ते प्रदूषण स्तर से बचाव के लिए व्यक्तिगत–निजी स्तर

पर एक पूरा बाजार विकसित हुआ तथा रूम एयर प्यूरिफायर, फिल्ट्रेशन फेस मास्क और नेबुलाइजर जैसे उत्पाद उभरकर सामने आए।

आर्थिक विकास और हर कीमत पर लाभ की तलाश की प्रवृति विकसित होने की वजह से अविभाज्य पूंजीवादी विकास का सिद्धांत समीक्षा के दायरे में आ गया है। मानव और अन्य जीव प्राणियों के हित संबंधी इन गंभीर खतरों को देखते हुए विकासशील देशों में सकारात्मक सोच विकसित हुई। पर्यावरण को बचाने तथा उत्पादन लागत की वृद्धि को रोकने के लिए हरित वित्त व्यवस्था की संकल्पना विकसित हुई। हरित अर्थव्यवस्था को पर्यावरण की दृष्टि से आर्थिक विकास के लिए जिम्मेदार माना गया। यह न केवक विकास का समर्थन करता है बल्कि स्थिरता और न्याय दोनों समस्याओं से निपटने का मार्ग भी दिखाता है। इसे स्मोकस्क्रीन (आच्छादित धुआँ) का नाम देकर इसकी व्यापक आलोचना की गई जो सतत विकास के के उद्देश्यों के प्राप्त करने में बाधक है। विकास के विस्तार के नाम पर अंधाधुंध लाभ कमाने की कवायद पूंजीवाद के लिए स्वाभाविक भी है । पूंजीवाद के इस तर्क ने मानव और अन्य जीवों की प्रकृति के बीच के मेटाबोलिक संबंधों में दरार पैदा कर दी है और इसकी प्रतिपूर्ति के लिए क्रांतिकारी प्रणालीगत परिवर्तनों की आवश्यकता है ।

इस संदर्भ में, अधिकांश विद्वानों की ने खपत, माल–असबाब का संरक्षण तथा पूंजीवाद से प्रेरित सामग्री और वित्तीय विकास के रूपमें विकास की अवधारणा की आलोचना की है। विकास के साथ समस्या केवल इसके कार्यान्वयन का नहीं है बल्कि समझ–बूझकर इसमें उतरोत्तर सुधार सुनिश्चित करना भी एक चुनौती है। इसे सुधारकर ही विकासवाद की संकल्पना का मूर्त रूप दिया जा

सकता है। विकास को समाज में वांछनीय परिवर्तन प्राप्त करने के साधन के रूप में परिभाषित किया गया है और इसे प्राप्त करने की प्रक्रिया पर विश्व के देशों द्वारा अधिक ध्यान दिया जा रहा है। विश्व के विकसित देशों ने अपने अपने तरीके से विकास आंदोलन ओर सामाजिक – पारिस्थितिक हितों को प्राथमिकता देने का आह्वान किया है जो सामग्री का अत्यधिक उपभोग के बजाय इसके पुनर्वितरणतथा कॉर्पोरेट मुनाफे को कम करने के प्रयास से संबन्धित है। पूरा विश्व अब पर्यावरण की रक्षा व देखभाल तथा पर्यावरण संबंधी न्याय की दिशा में एकजुट होकर काम कर रहा है। वैकल्पिक रूप से, लैटिन अमेरिका के कई देशों ने ब्यूएन विविर BuenVivir (अच्छी तरह से या अच्छा रहने वाले) की स्वदेशी अवधारणा को अपनाया है जो समुदाय, पारिस्थितिकी, संस्कृति और क्षेत्र की आध्यात्मिकता से जुड़ी है। स्वदेशी संस्कृतियों की मान्यता न केवल एकसमान है बल्कि विकास को वैकल्पिक दृष्टि प्रदान करना विकास के संदर्भ में हुए सांस्कृतिक नरसंहार के लंबे इतिहास से एक क्रांतिकारी बदलाव है। इसी तरह विशुद्ध पर्यावरण के संरक्षण को अस्वीकार करते हुए, संरक्षणवादी देशों में मानव और अन्य जीव प्राणियों के प्रति सहानुभूति का भाव बढ़ा है तथा इसके असतीतवे को स्वीकारने लगे हैं पर्यावरण संबंधी चिंताएं विकास की चिंताओं से अलग नहीं हैं और लोगों में इसके प्रति न्याय, पुनर्वितरण और इसके संरक्षण में एकरूपता संबंधी विचार दृढ़ हुए हैं।

बोध प्रश्न

1) पर्यावरण विरोधी पूंजीवादी निष्कर्षण और संसाधन क्षरण के खिलाफ स्वतंत्रता के बाद भारत में नागरिक आवाज़ों और पर्यावरण आंदोलनोंके बारे में टिप्पणी लिखें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) रिक्त स्थान को भरें:

(क) ..... एक टेक्नो–सोशल पैकेज था जो अमेरिकी वित्तपोषण, प्रभाव और प्रौद्योगिकी के साथ आया और औपनिवेशिक भारत के बाद कृषि प्रौद्योगिकी और कृषि संबंधों को बदल दिया ।

(ख) भारतीय संविधान के अनुच्छेद ..... में कहा गया है कि राज्य पर्यावरण की रक्षा और सुधार करेगा और देश के वनों और वन्यजीवों की रक्षा करेगा ।

(ग) ..... स्वतंत्र भारत में प्राथमिक वन विधान बना हुआ है ।

(घ) 1983 में संयुक्त राष्ट्र ने बिना पर्यावरणीय क्षति आर्थिक विकास की संभावनाओं की जांच करने के लिए ..... स्थापित की।

(च) भारत ने 1987 में ओजोन परत को कम करने वाले ..... सम्मेलन में हस्ताक्षर किए थे।

10.6 सारांश

आपने इस इकाई में पढ़ा है कि विकास परियोजनाओं के नकारात्मक पर्यावरणीय परिणाम हो सकते हैं। यह समय पर्यावरण एवं विकास के बीच बेहतर ताल–मेल बिठाने का समय है। हमें भारत में विकसित वनों और वन्यजीवों के दीर्घकालिक संरक्षण के लिए योजना बनाने की जरूरत है, साथ ही संसाधनों के उपयोग की दक्षता में सुधार करना आवश्यक है।

10.7 शब्दावली

जलवायु परिवर्तन : पृथ्वी की जलवायु में दीर्घकालिक परिवर्तन, विशेष रूप से औसत वायुमंडलीय दबाव में वृद्धि के कारण होने वाला परिवर्तन ।

हरित अर्थव्यवस्था : पर्यावरण की दृष्टि से जिम्मेदार आर्थिक विकास जो सामाजिक–आर्थिक विकास का समर्थन करता है और

साथ ही स्थिरता और न्याय दोनों चिंताओं को शामिल करता है।

10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) भाग संख्या 10.4 देखें। चिपको और नर्मदा बचाओ जैसे आंदोलनों के बारे में।

2) क) हरित क्रांति, (ख) 48, ग) 1927 का भारतीय वन अधिनियम, घ) ब्रंटलैंड कमीशन, ई) मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल

10.9 संदर्भ ग्रंथ

Arnold, David and Ramachandra Guha (1995) (Eds.), *Nature, Culture, Imperialism: Essays on the Environmental History of South Asia*. New Delhi: Oxford University Press.

Gadgil, Madhav (2001), *Ecological Journeys: The Science and Politics of Conservation in India*. New Delhi: Permanent Black.

Gadgil, Madhav and Ramachandra Guha (1993), *My Fissured Land*. Berkeley University of California Press.

Laine, Nicolas and T. B. Subba (2014), *Nature, Environment and Society Conservation Governance and Transformation in India*. Orient Blackswan.

Mandala, Vijay Ramdas (2015), 'The Raj and the Paradoxes of Wildlife Conservation: British Attitudes and Expediencies'. *The Historical Journal, Vol. 58, No. 01*, pp. 75-110.

Rangarajan, Mahesh (1996). 'Environmental Histories of South Asia: A Review Essay'. *Environment and History, No. 2, South Asia Special Issue (June 1996),* pp. 129-43.

Fisher. M. H. (2018). *An Environmental History of India: From Earliest Times to the Twenty-First Century*. Cambridge University Press.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY